ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.1133828

INTERNATIONAL JOURNAL OF RESEARCH – GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository

Arts

भारतीय चित्रकला में ललित कला व लोक संस्कृति का समावेश

Kanchan Kumari *1
*1 Instructor, Drawing & Painting Department, Faculty of Arts, D.E.I., Agra, India

सारांश :– भारत एक प्राचीन सांस्कृतिक देश है। कला मानव संस्कृति की उपज है। इसका उदय मानव की सौन्दर्य भावना का परिचायक है। यहाँ की कला एवं संस्कृति में लोककला का अनूठा समन्वय दिखाई देता है। अनेक विद्वानों ने समय–समय पर लोककला के महत्त्व को बताया है। लोककलाऐं हमारे देश में लोक परम्पराओं संस्कृति का दर्पण है। जो विभिन्न रीति रिवाज उत्सव में देखे जा सकते है। भारत जैसें देश में विभिन्न प्रान्तों में विविध रूपों में लोककला देखी जा सकती है। जो विभिन्न नामों से जानी जाती है।

दैनिक जीवन की इन उपयोगी वस्तुओं का निर्माण यद्यपि ललित कला के लक्ष्य से नहीं हुआ, तथापि सामूहिक जीवन की कलाप्रियता का अंष हमें इसमें दृष्टिगोचर होता है और इन्हें कलात्मक वस्तुएँ कहे तो गलत नहीं होगा। सभ्यता के विकास के साथ–साथ मानव ने अपनी निर्मित वस्तुओं में उपयोगी धारणा को नहीं छोड़ा परन्तु उसकी कलाप्रियता ने अपनी प्रवाहशीलता द्वारा कुछ मात्रा में उन्हें ललित कला के लिये सुन्दर उपादान बना दिया।

कला के अर्न्तगत चित्रकला, स्थापत्यकला, मूर्तिकला तथा हस्तकला प्रमुख है और सभी कलाओं की कलात्मक अभिव्यक्ति की दृष्टि से भारत के जन–जीवन में न केवल प्रागैतिहासिक युग से अपितु वर्तमान में भी इसका विषेष महत्व दृष्टिगोचर होता है।

लोक संस्कृति का अहम भाग है लोक कला। यह संस्कृति का पहचान है जहाँ तक भारतीय लोक संस्कृति की बात है इसमें लोक कला का विशेष महत्व है।

वर्तमान में भारतीय लोक कला अंतर्राष्ट्रीय पटल पर स्थापित होकर लोकप्रिय हो चुकी है क्योंकि भारतीय संस्कृति में अनेकता में एकता के साथ आध्यात्मिकता के भाव भी जुड़े है। इसमें सदैव से मानव कल्याण का भाव भी है। सर्वे भवन्तु सुखिनः का भाव लोक संस्कृति का आधार है।

इस प्रकार भारतीय लोक संस्कृति में रंगों का संयोजन मानव के मनोभावों के अनुरूप उल्लास, अध्यात्म की सहज अभिव्यक्ति है जो चित्रों में अभिव्यक्त हुआ है।अब जहाँ तक बात चित्रकला और रंगों की है तो यह बात सीधे तौर कहना ही सही होगा कि चित्रकला में रंग व चित्र परस्पर एक–दूसरे से सम्बद्ध होते हैं। आकार एवं रंग, प्रकृति के अनंत रूपों में बहुत ही महत्वपूर्ण है। चित्रकला में चित्रकार की भावाभिव्यक्ति को प्रदर्षित करने का माध्यम तूलिका एवं रंग ही होते हैं, जिनके द्वारा वह अपने मनोभावों की व्यंजना करता हैं। कला में आध्यात्म है, कला में रस है, कला में सौन्दर्य है। रंगों के माध्यम से साकार प्रकृति को हम निराकार रूप में रंग सकते हैं।

भारतीय चित्रकला की आज अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर धूम हो गयी बिहार के एक छोटे से राज्य से निकलकर विश्व में अनेक राष्ट्रों में भारतीय परचम को लयराया और आज अन्तर्राष्ट्रीय कला बाजार में अपनी पैंठ बना लिया है और इसका भविष्य उज्जवल है, आने वाले समय में कलाकारों को इस व्यवसायिक दौर में रोजगार के अवसर प्राप्त है और प्राप्त होते रहेंगें। व्यावसायिक दृष्टिकोण से अनेक कला दीर्घाओं में यहां के चित्रों के विविध रूपों को देखा जा सकता है।

मुख्य शब्द – ललित कला, लोक संस्कृति, चित्रकला, लोककला

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.1133828

Cite This Article: Kanchan Kumari. (2017). "भारतीय चित्रकला में ललित कला व लोक संस्कृति का समावेश." *International Journal of Research - Granthaalayah,* 5(12), 141-146. https://doi.org/10.5281/zenodo.1133828.

प्रस्तावना

भारत एक प्राचीन सांस्कृतिक देश है। कला मानव संस्कृति की उपज है। इसका उदय मानव की सौन्दर्य भावना का परिचायक है। यहाँ की कला एवं संस्कृति में लोककला का अनूठा समन्वय दिखाई देता है। अनेक विद्वानों ने समय–समय पर लोककला के महत्त्व को बताया है। लोककलाऐं हमारे देश में लोक परम्पराओं संस्कृति का दर्पण है। जो विभिन्न रीति रिवाज उत्सव में देखे जा सकते है। भारत जैसें देश में विभिन्न प्रान्तों में विविध रूपों में लोककला देखी जा सकती है। जो विभिन्न नामों से जानी जाती है।

सौन्दर्यानुभूति को व्यक्त होने वाली कलाएं ललित कलायें कहलाती है। वह कला जिसके अभिव्यंजन से सुकुमारता और सौन्दर्य की अपेक्षा हो और जिसकी सृष्टि मुख्यतः मनोविनोद के लिए हो। जैसें– गीत, संगीत, नृत्य, नाटक, तथा विभिन्न प्रकार की चित्रकलाएं। इसमें विभिन्न माध्यमों का प्रयोग पीढ़ी–दर पीढ़ी होता रहता है।

इतिहासकारों के अनुसार ललित कलाएं मात्र चित्रकला, मूर्तिकला, वास्तुकला तक ही सीमित थी। परन्तु आज के सन्दर्भ में ललित कला का रूप कुछ इससे विस्तृत हो गया है। और कला में दिखने वाली कला के साथ–साथ निष्पादन कला, चित्रकला, मूर्तिकला, लेखन कला, संगीत, नृत्य, नाटक, वास्तुकला, छायाचित्र इंस्टोलेशन व छपाई की कला जैसी विविध शैलियों को ललित कला से जोड़कर देखा जाता है।
फाईन आर्ट शब्द का अर्थ आज बहुत बड़े स्तर और आम जीवन से हट कर किसी भी कार्य की दक्षता के साथ जोड़ कर देखा जाने लगा है जैसें खेल को भी आज खिलाड़ियों ने फाइन आर्ट के समरूप लाकर खड़ा कर दिया है।

ललित कला को व्यावसायिक कला से बिल्कुल भिन्न माना गया है क्योंकि मार्डन आर्ट के शुरूआती दौर में कला के लिए समाज के परिपेक्ष्य में कुल मूल्यों को आधार मानकर समसामयिक जरूरतों और रूचि को उजागर किया गया है।जिससे कला के सन्दर्भ में माने जाने की वैचारिक धारा को बढ़ावा मिल सके। जबकि कला विचारकों ने कला के लिए मानदण्ड निर्धारित न करके कला के विष्य, सौन्दर्य, भाव को ज्यादा महत्व दिया है।

संगीत,नृत्य व नाटक मंचन इत्यादि लतित कला का विरोधाभास इसलिये भी बढ़ जाता है कि ललित कला में मात्र पारम्परिक कला, चित्रण ही नहीं बल्कि निष्पादनकलाओं के साथ–साथ लेखन कला भी इसी फाईन आर्ट का महत्वपूर्ण हिस्सा है।

दैनिक जीवन की इन उपयोगी वस्तुओं का निर्माण यद्यपि ललित कला के लक्ष्य से नहीं हुआ, तथापि सामूहिक जीवन की कलाप्रियता का अंष हमें इसमें दृष्टिगोचर होता है और इन्हें कलात्मक वस्तुएँ कहे तो गलत नहीं होगा। सभ्यता के विकास के साथ–साथ मानव ने अपनी निर्मित वस्तुओं में उपयोगी धारणा को नहीं छोड़ा परन्तु उसकी कलाप्रियता ने अपनी प्रवाहशीलता द्वारा कुछ मात्रा में उन्हें ललित कला के लिये सुन्दर उपादान बना दिया। यह केवल आधुनिक युग की देन है कि जहां कला एक ओर सामूहिक न होकर न होकर व्यक्तिगत हुई, दूसरी ओर उसकी उपयोगिता कला, कला के लिए हो, इस उद्देश्य को लेकर चली, यह दूसरी बाद बाद है कि अनुपयोगी कला का प्रभाव भी हमारी उपयोगी

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.1133828

वस्तुओं पर पड़ा और एक प्रकार से उसने सामूहिक रूप ले लिया। मोहनजोदाडों की नृर्तकी की धातु की मूर्ति से उस काल की कला का स्तर, दृष्टिकोण एवं आवष्यक गुण हमें स्पष्ट परिलक्षित होते है और यदि हम बाद की धातु मूतियों में देखें, जो कि दसवीं शताब्दी से प्रचुर मात्रा में बननी प्रारम्भ हो गई थीं, तो नर्तकी उन सब गुणों से परिपूर्ण है जो एक उच्च कोटि की मूर्ति में होने चाहिए। नटराज की काँसे की मूर्ति की भावपूर्ण गतिशीलता में हम परम्परागत कला सौन्दर्य के सब लक्षणों के साथ–साथ आधुनिक मापदंड़ों द्वारा भी सर्वगुण सम्पन्न पाते है।

चित्र सं.–1–मोहनजोदाडों की नृर्तकी की धातु की मूर्ति

चित्र सं.–2– नटराज की काँसे की मूर्ति

सभी कलाओं का भॅाति धातु और काष्ठ की मूर्तियाँ भी विदेशी राज्य के भिन्न दृष्टिकोण के कारण और उचित संरक्षण तथा प्रोत्साहन के अभाव में निर्जीव व रूढ़िग्रस्त हो गई। कहीं उसका लोप हुआ तो कहीं उनके कुशल कारीगरों ने जीवननिर्वाह के लिए अन्य काम सम्भांल लिए। शिक्षित कलाकारों ने भी विदेशी कला का अनुसरण किया किन्तु अब फिर इन खोजी हुई वैभवशाली कलाओं की ओर ध्यान दिया जा रहा है और अनेक कलाकारों ने आज काष्ठ मूर्तिकला को अपना माध्यम बनाया है जिसमें भारतीय भारतीय

 ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.1133828

परम्परागत शैली के साथ हम आज अन्तर्राष्ट्रीय कलादृष्टि का सुन्दर समन्वय पाते है।प्रत्येक माध्यम का अपना स्वतन्त्र गुण है जो दूसरे माध्यम में हमें नहीं मिलता। धातु की मूर्ति काष्ठ जैसी न लगे और काष्ठ की मूर्ति पत्थर, सीमेंट अथ्वा धातु जैसी न लगे और उसके अंर्तहित गुणों को परखकर माध्यम के अनुकूल, रंग, रूप को ध्यान में रख कलाकार अपनी कृति की कल्पना करे और उसके गोपनीय सौन्दर्य को उन्मीलित कर दे जिससे उतार चढ़ाव, रेखा इत्यादि के सम्मिश्रण से एक मौलिक रचना प्रस्तुत हो, यही आधुनिक कलाकार का ध्येय और उद्‌देश्य है।

कला के अर्न्तगत चित्रकला, स्थापत्यकला, मूर्तिकला तथा हस्तकला प्रमुख है और सभी कलाओं की कलात्मक अभिव्यक्ति की दृष्टि से भारत के जन–जीवन में न केवल प्रागैतिहासिक युग से अपितु वर्तमान में भी इसका विषेष महत्व दृष्टिगोचर होता है।

लोक संस्कृति का अहम भाग है लोक कला। यह संस्कृति का पहचान है जहाँ तक भारतीय लोक संस्कृति की बात है इसमें लोक कला का विशेष महत्व है। कला का प्रयोजन अभिव्यक्ति, यश प्राप्ति, हदय तत्व की प्रधानता, धनोपार्जन, सेवा, आनंद की प्राप्ति, विष्व कल्याण आदि हो सकते है।

लोक संस्कृति में चित्रों की प्राचीनता भाषा से भी प्राचीन है। लोक संस्कृति में विभिन्न रंगों को प्रयोग हुआ। ये रंग मानव मन की भावनाओं को भी व्यक्त करते है। जैसे– पीला रंग प्रसन्नता दायक, यष, दिव्यता, सूर्य प्रकाश आदि का प्रतीक है। लाल रंग सर्वाधिक उत्तेजक व आकर्षक है, सक्रिय और आक्रामक है, साथ ही यह रंग स्त्रियों में भी लोकप्रिय है। नीला रंग शांति, माधुर्य, ईमानदारी, आषा और लगन का प्रतीक है। हरा रंग तटस्थ व ताजगी का प्रतीक है। बैंगनी रंग राजसी रंग है। समृद्धि, वैभव व शौर्य का प्रतीक है। सफेद रंग पवित्रता, स्वच्छता, शांति और तेजस्विता का प्रतीक है। काला रंग प्रकाषहीन, उत्तेजनाहीन, शोक, भय पाप, निराषा का प्रतीक है।इस प्रकार लोक संस्कृति में कला मानव की सहचरी के रूप में सदा साथ रही है।

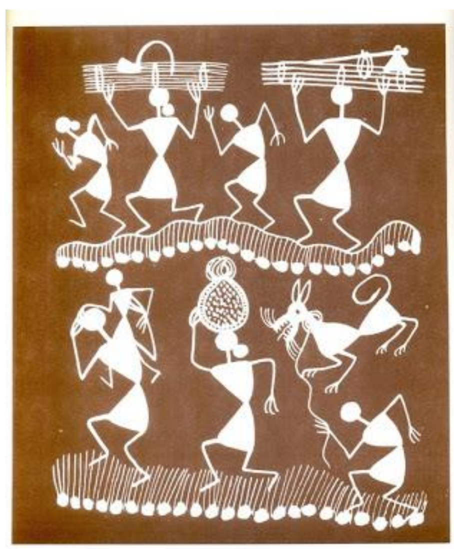

चित्र सं.–3

जीवन पद्धति मार्ग प्रशस्त करती है, संस्कृति के नियम शास्वत होते है, जो उस समय को एक विशिष्ट जीवन व्यतीत करने की चेतना प्रदान करतें हैं, परिणामस्वरूप हम देखे तो हर देश, समाज अथवा राज्य एक विशिष्ट संस्कृति के लिए जाना जाता है।संस्कृति क्या है, इसकी जानकारी अपरिहार्य है। सामान्यतः सभ्यता एवं संस्कृति को पर्यायवाची मानकर विचार करने की भ्रान्तिपूर्ण प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होता है।

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.1133828

संस्कृति से तात्पर्य उन सिद्धान्तों से है, जो समाज में निश्चित प्रकार का जीवन व्यतीत करने की प्रेरणा देते हैं, हमारे जीवन में जो भी मानसिक अवस्था, मानसिक प्रवृत्ति हैं उससे जीवन को परिकृष्त, शुद्ध, पवित्र बनाया जाना ही संस्कृति है।

प्रख्यात इतिहासकार एम.सी. वर्किट ने लिखा है कि –"किसी देश अथवा जाति की संस्कृति के विकास का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने के लिए उस संस्कृति की कला को जानना आवश्यक है। इसी के माध्यम से उस काल की सभ्यता, संस्कृति को जाना जा सकता है।"

वर्तमान में भारतीय लोक कला अंतर्राष्ट्रीय पटल पर स्थापित होकर लोकप्रिय हो चुकी है क्योंकि भारतीय संस्कृति में अनेकता में एकता के साथ आध्यात्मिकता के भाव भी जुड़े है। इसमें सदैव से मानव कल्याण का भाव भी है। सर्वे भवन्तु सुखिनः का भाव लोक संस्कृति का आधार है।

चित्र सं.–4

भारतीय संस्कृति मूलतः आध्यात्मिक है। आध्यात्मिकता में सफेद रंग विशेष महत्व होता है। जैसा कि बताया जा चुका है यह पवित्रता और शांति का प्रतीक है भारतीय संस्कृति में अध्यात्म के साथ उत्सवधर्मिता को भी सम्मिलित किया गया है। इसी कारण प्रसन्नतादायक पीले रंग को हिंदू लोक संस्कृति में विशेष स्थान दिया गया है।

इस प्रकार भारतीय लोक संस्कृति में रंगों का संयोजन मानव के मनोभावों के अनुरूप उल्लास, अध्यात्म की सहज अभिव्यक्ति है जो चित्रों में अभिव्यक्त हुआ है।अब जहाँ तक बात चित्रकला और रंगों की है तो यह बात सीधे तौर कहना ही सही होगा कि चित्रकला में रंग व चित्र परस्पर एक–दूसरे से सम्बद्ध होते हैं। आकार एवं रंग, प्रकृति के अनंत रूपों में बहुत ही महत्वपूर्ण है। यदि आकार में रूपात्मकता है तो रंग में आकर्षण होगा ही। जब एक चित्रकार एक सुंदर चित्र की परिकल्पना करता है तो रूपाकारों के साथ–ही–साथ रंगों का भी विचार भी उसके मन में आता ही है। विभिन्न रंगों के प्रयोग द्वारा चित्रकार चित्र में सौन्दर्य की सृष्टि करता है। चित्रकला में चित्रकार की भावाभिव्यक्ति को प्रदर्शित करने का माध्यम तूलिका एवं रंग ही होते हैं, जिनके द्वारा वह अपने मनोभावों की व्यंजना करता हैं। कला में आध्यात्म है, कला में रस है, कला में सौन्दर्य है। रंगों के माध्यम से साकार प्रकृति को हम निराकार रूप में रंग सकते हैं।

भारतीय चित्रकला की आज अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर धूम हो गयी बिहार के एक छोटे से राज्य से निकलकर विश्व में अनेक राष्ट्रों में भारतीय परचम को लयराया और आज अन्तर्राष्ट्रीय कला बाजार में अपनी पैंठ बना

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
DOI: 10.5281/zenodo.1133828

लिया है और इसका भविष्य उज्जवल है, आने वाले समय में कलाकारों को इस व्यवसायिक दौर में रोजगार के अवसर प्राप्त है और प्राप्त होते रहेंगें। व्यावसायिक दृष्टिकोण से अनेक कला दीर्घाओं में यहां के चित्रों के विविध रूपों को देखा जा सकता है।

चित्र सं.–5

भारत के हर प्रदेश में कला की अपनी एक विशेष शैली और पद्धति है जिसे लोककला के नाम से जाना जाता है। लोककला के अलावा भी परम्परागत कला का एक अन्य रूप है जो अलग–अलग जनजातियों और देहात के लोगों में प्रचलित है। लोककला की अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में सम्भावना बहुत प्रबल है। भारत की ग्रामीण लोक चित्रकारी के डिजाइन बहुत ही सुन्दर हैं जिसमें धार्मिक और आध्यात्मिक चित्रों को उभारा गया है। भारतीय प्रागैतिहासिक मानव काल से लेकर वर्तमान काल तक के चित्रकला परिदृश्य में देखते है कि प्रत्येक मानव कलाकार रंगों से अछूता नहीं रहा। सम्पूर्ण लेख के पश्चात् हम कह सकते हैं कि रंग का कला में महत्वपूर्ण स्थान है।

भारतीय कला, संस्कृति की दृष्टि से न केवल राष्ट्रीय अपितु अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विशेष छवि बनाये हुये है। देश को विरासत में मिली साहित्यिक, पुरातात्विक, लोक कला, संस्कृति को बहुत प्रभावी एवं सामान्य जन तक पहुचांने तथा जीवित बनाये रखने की स्वतन्त्रता ही कला संस्कृति का योगदान है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

[1] अविनाश बहादुर शर्मा– भारतीय चित्रकला का इतिहास, प्रकाश बुक डिपो, बरेली
[2] वाचस्पति गैरोला– भारतीय चित्रकला का संक्षिप्त इतिहास, इलाहाबाद,1972.
[3] उपाध्याय, भगवत् शरण– भारतीय कला का इतिहास, नई दिल्ली, 1984.
[4] राम चन्द्र शुक्ल– 'कला और आधुनिक प्रवृत्तियॉ
[5] डॉ.गिरिज किशोर अग्रवाल– 'कला और कलम'
[6] www.wikipidia.org.com
[7] www.google.com./lokkala+painting.

*Corresponding author.
E-mail address: kanchan3july1990@ gmail.com